Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971
(ONLINE)

नई सदी की स्त्री और 'तलाक' की बदलती परिभाषा : एक विश्लेषण

रूबी कुमारी
शोधार्थी विश्वविद्यालय हिंदी-विभाग
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

शोध-सार :

प्रस्तुत आलेख में इक्कीसवीं सदी के संक्रमणकालीन समाज में स्त्री-पुरुष संबंधों के बदलते स्वरूप और 'तलाक' के प्रति विकसित होती नई दृष्टि का अनुशीलन किया गया है। शोध का मुख्य केंद्र यह है कि कैसे समकालीन हिंदी साहित्य में 'तलाक' अब केवल एक पारिवारिक विघटन या सामाजिक कलंक न रहकर, स्त्री की अस्मिता, आत्मसम्मान और स्वाधीनता का एक सशक्त विकल्प बनकर उभरा है।

आलेख में अलका सरावगी की कहानियों में व्याप्त 'संवादहीनता', मैत्रेयी पुष्पा की 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में वर्णित 'प्रतिरोध का स्वर' और मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी' में 'मातृत्व और विच्छेद' के द्वंद्व का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। साथ ही, प्रभा खेतान की 'अन्या से अनन्या' के माध्यम से उस अनाम आजादी का विश्लेषण किया गया है।

शोध का निष्कर्ष यह स्पष्ट करता है कि आज की स्त्री "तुम मेरे टुकड़ों पर पलती हो" जैसे पितृसत्तात्मक ताने और अपमानजनक समझौतों की उम्र भर की कैद से बेहतर, एक गरिमापूर्ण अलगाव और 'स्व' की खोज को प्राथमिकता दे रही है। यह आलेख सिद्ध करता है कि नई सदी में 'तलाक' एक अंत नहीं, अपितु स्त्री के लिए जीवन को दूसरा अवसर प्रदान करने वाला एक साहसी 'नव-सर्जन' है।

बीज शब्द: स्त्री-विमर्श, तलाक, आत्मसम्मान, मैत्रेयी पुष्पा, मन्नू भंडारी, अलका सरावगी, आर्थिक आत्मनिर्भरता, अस्मिता।

प्रस्तावना :

नई सदी का हिंदी कथा-साहित्य स्त्री-पुरुष संबंधों के उस संक्रमण काल का गवाह है, जहाँ पारंपरिक पितृसत्तात्मक ढाँचा चरमरा रहा है। अल्का सरावगी के उपन्यासों और कहानियों में हम देखते हैं कि स्त्री अब केवल एक 'सहगामिनी' मात्र नहीं है, बल्कि वह अपनी 'मर्जी की मालिक' होने का दावा करती है। जैसा कि अलका जी ने उल्लेख किया, आज की महिलाएँ उन रूढ़िवादी रिश्तों की कैद में जीना नहीं चाहतीं जो उन्हें मानसिक और भावनात्मक रूप से प्रताड़ित करते हों। सरावगी की कहानियों में 'तलाक' या अलगाव को केवल एक कानूनी अलगाव के रूप में नहीं, बल्कि उन रस्मों और परंपराओं से मुक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए जो स्त्री के व्यक्तित्व का दमन करती हैं।

"संवाद का टूट जाना किसी भी रिश्ते की सबसे पहली मौत होती है। जब दो लोग एक घर में रहकर भी एक-दूसरे की खामोशी से डरने लगें, तो वह रिश्ता सिर्फ एक औपचारिकता बनकर रह जाता है।1

आज के संबंधों में दरार की एक सबसे बड़ी वजह वह आर्थिक निर्भरता है, जिसका उपयोग पुरुष अक्सर एक हथियार के रूप में करता रहा है। जब पुरुष अपनी सत्ता का प्रदर्शन यह कहकर करता है कि "तुम मेरे टुकड़ों पर पलती हो", तो वह अनजाने में ही उस रिश्ते की जड़ें काट देता है। नई सदी की स्त्री इस अपमानजनक स्थिति से निकलने के लिए ही 'अपने पैरों पर खड़ा होना' चाहती है। अल्का सरावगी के कथा-संसार में आर्थिक स्वावलंबन और आत्मसम्मान का गहरा संबंध है। उनके यहाँ स्त्री का अपने पैरों पर खड़ा होना केवल पैसा कमाना नहीं है, बल्कि उस 'दास्ता' से मुक्त होना है जो उसे घर की चारदीवारी में कैद रखती थी।

जब स्त्री आर्थिक और मानसिक रूप से स्वतंत्र होती है, तो पुरुष के पारंपरिक 'अहं' (Ego) को चोट पहुँचती है। पुरुष समाज अक्सर इस बदलाव को स्वीकार करने में असमर्थ रहता है कि जिस स्त्री को वह अपनी संपत्ति समझता था, वह अब अपनी जिंदगी के फैसले खुद ले रही है। यही वह बिंदु है जहाँ से 'संवादहीनता' की शुरुआत होती है। पति-पत्नी के बीच बातचीत के रास्ते इसलिए बंद हो जाते हैं क्योंकि पुरुष उस 'नई स्त्री' को पहचान नहीं पाता और स्त्री अपने आत्मसम्मान से समझौता करना नहीं चाहती।

पुराने दौर में 'तलाक' को समाज में एक कलंक और स्त्री की हार के रूप में देखा जाता था, लेकिन आज की परिभाषा बदल गई है। जैसा कि हम समाज में देखते है पति-पत्नी के रिश्ते में अब प्रेम के साथ-साथ 'सेल्फ-रेस्पेक्ट' अनिवार्य है। जहाँ आत्मसम्मान नहीं है, वहाँ रिश्ता एक बोझ बन जाता है। अल्का सरावगी के पात्र यह बखूबी दिखाते हैं कि एक दमघोंटू रिश्ते को उम्र भर ढोने से बेहतर है कि उसे गरिमा के साथ समाप्त कर दिया जाए। आज की स्त्री के लिए समाज की सोच से ज्यादा महत्वपूर्ण उसका अपना मानसिक सुकून और स्वाभिमान है।

अतः, नई सदी में 'तलाक' अब केवल एक पारिवारिक विघटन नहीं है, बल्कि यह स्त्री के उस साहस का प्रतीक है जो उसे एक अपमानजनक जीवन से बाहर निकालकर अपनी शर्तों पर जीने का हक देता है। यह रूढ़ियों के विरुद्ध एक मूक विद्रोह है, जहाँ स्त्री यह साबित करती है कि वह किसी की छाया नहीं, बल्कि एक स्वतंत्र इकाई है।

नई सदी के कथा-साहित्य में 'तलाक' शब्द अपनी पुरानी और नकारात्मक छवि को तोड़कर एक नए अर्थ में परिभाषित हो रहा है। जहाँ पारंपरिक समाज इसे एक 'अंत' (End) के रूप में देखता था, वहीं आधुनिक विमर्श इसे 'जीवन को दूसरा मौका' (A second chance at life) देने के रूप में स्वीकार कर रहा है। मनुष्य को एक ही जीवन मिला है और उसे किसी गलत या दमघोंटू रिश्ते की बलिवेदी पर चढ़ा देना न केवल कायरता है, बल्कि अपने अस्तित्व के प्रति एक बड़ा अपराध भी है।

मैत्रेयी पुष्पा अपनी आत्मकथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में इसी मुक्ति की वकालत करती हैं। उनके अनुसार, विवाह का अर्थ किसी की गुलामी स्वीकार करना नहीं है। जब रिश्ता एक 'कैद' बन जाए, जहाँ आपकी भावनाओं और आपकी अस्मिता का कोई मूल्य न रहे, तो उस कैद की दीवारों को तोड़ देना ही एकमात्र विकल्प बचता है। मैत्रेयी जी की नायिकाएँ उस 'गुड़िया' की छवि को झटक देती हैं जिसे समाज अपनी मर्जी से नचाना चाहता है। यहाँ 'तलाक' एक ऐसी 'आजादी' बनकर उभरता है, जो स्त्री को फिर से अपनी शर्तों पर सांस लेने का हक प्रदान करता है।

"स्त्री का अपना एक मुकाम होना चाहिए। किसी के सहारे जीना तो सिर्फ सांसें खींचना है..।2

आज की स्त्री के लिए किसी के 'भरोसे' जीना अब गौरव की बात नहीं रही। जैसा कि मैंने कहानी को पढ़ कर पाया कि "किसी के टुकड़ों पर पलने से बेहतर है खुद के लिए नई जिंदगी बनाना", यही सोच आज की महिला को अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए प्रेरित करती है। जब स्त्री आर्थिक और मानसिक रूप से स्वतंत्र होती है, तो उसे अपनी पहचान (Identity) के लिए किसी पुरुष के नाम या सहारे की आवश्यकता नहीं रह जाती। मैत्रेयी पुष्पा के पात्रों में यह स्वावलंबन एक ढाल की तरह काम करता है। उनके यहाँ स्त्री अपनी पहचान स्वयं गढ़ती है–वह समाज में अपना 'मुकाम' हासिल करती है और यह सिद्ध करती है कि एक असफल विवाह उसके व्यक्तित्व की विफलता नहीं है।

"विवाह यदि स्त्री के पाँवों की बेड़ी बन जाए और उसकी आत्मा को कुचलने लगे।3

विवाह की संस्था में 'तलाक' को अक्सर 'बर्बादी' कहा जाता रहा है, किंतु आधुनिक दृष्टिकोण इसे 'पुनर्निर्माण'

मानता है। गलत रिश्ते में बंधे रहकर अपनी पूरी जिंदगी को तिल-तिल कर खत्म करने से कहीं ज्यादा साहसी कदम यह है कि उस रिश्ते से बाहर निकलकर अपनी प्रतिभा और अपनी खुशियों को एक नया आकाश दिया जाए। मैत्रेयी पुष्पा दिखाती हैं कि कैसे स्त्री अलगाव के बाद अपनी पढ़ाई, अपने करियर और अपनी सामाजिक भूमिका में कहीं अधिक सफल होकर उभरती है। यह उस 'भीतरी गुड़िया' का वास्तविक जागरण है जो अब किसी के दबाव में नहीं, बल्कि अपनी मर्जी के प्रकाश में खिलना चाहती है।

नई सदी की स्त्री के लिए आत्मसम्मान (Self-respect) की रक्षा करना ही उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। वह अब इस बात से नहीं डरती कि समाज क्या सोचेगा, बल्कि वह इस बात से डरती है कि अगर उसने आज स्टैंड नहीं लिया, तो वह खुद की नजरों में गिर जाएगी। प्रभा खेतान की 'अन्या से अनन्या' वाली उस 'अनाम आजादी' के विपरीत, मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री एक 'सप्रमाण' और 'ससम्मान' जीवन की पक्षधर है। यहाँ तलाक एक विसर्जन नहीं, बल्कि एक 'नव-सर्जन' है, जहाँ स्त्री अपनी नियति की मालिक खुद बनती है।

नई सदी में तलाक की परिभाषा बदलते हुए भी एक धरातल पर आकर आज भी ठिठक जाती है–वह है 'मातृत्व'। एक स्त्री के लिए तलाक केवल पति से विच्छेद नहीं होता, बल्कि वह उसके समूचे अस्तित्व और विशेषकर उसके बच्चों के भविष्य पर लगा एक प्रश्नचिह्न बन जाता है। मन्नू भंडारी का कालजयी उपन्यास 'आपका बंटी' इसी मर्मन्तक पीड़ा का जीवंत दस्तावेज है।

स्त्री स्वभावतः जुड़ाव की पक्षधर होती है। वह अंतिम समय तक कोशिश करती है कि घर की दीवारें सलामत रहें। लेकिन जब रिश्ता केवल 'बोझ' बन जाए और आत्मसम्मान की बलि माँगने लगे, तब वह थककर मुक्ति की तलाश करती है। 'आपका बंटी' की नायिका 'शकुन' इसी छटपटाहट का प्रतीक है। वह अजय से अलग तो हो जाती है, लेकिन उसका मातृत्व उसे चैन से जीने नहीं देता। मन्नू भंडारी ने शकुन की इस मानसिक स्थिति को बहुत बारीकी से उकेरा है:

"शकुन को लगा, जैसे वह एक ऐसे चौराहे पर खड़ी है जहाँ से जाने वाले सारे रास्ते बंद हैं। अजय से अलग होना स्वाभिमान की जीत थी, पर बंटी की आँखों में तैरता सवाल उसकी हार बन गया।"4

यह बात अत्यंत मार्मिक है कि एक सामान्य लड़की की तुलना में एक 'माँ' के लिए अपने सपनों को पूरा करना कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण है। समाज उसे बार-बार याद दिलाता है कि उसकी अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है, वह केवल एक 'माँ' है। शकुन जब कॉलेज की प्रिंसिपल बनती है और अपनी नई दुनिया बसाने की कोशिश करती है, तो बंटी का अस्तित्व उसके मार्ग में एक मूक अवरोध बनकर खड़ा हो जाता है। उपन्यास में एक जगह अजय कहता है:

"तुम अपनी महत्वाकांक्षाओं के लिए बंटी की बलि चढ़ा रही हो शकुन।5

यही वह ताना है जो आज की स्त्री को भी झेलना पड़ता है। यदि वह अपने लिए सुकून चुनती है, तो उसे 'स्वार्थी' घोषित कर दिया जाता है। लेकिन यहाँ प्रश्न यह है कि क्या एक तनावपूर्ण और कड़वाहट भरे माहौल में पला बच्चा मानसिक रूप से स्वस्थ रह सकता है?

आज की नई सदी की स्त्री यह समझने लगी है कि घुट-घुट कर जीने वाले माता-पिता के बीच रहकर बच्चा जो मानसिक आघात सहता है, वह अलगाव के दुख से कहीं अधिक गहरा होता है। 'आपका बंटी' में बंटी का व्यक्तित्व धीरे-धीरे बिखरने लगता है क्योंकि वह अपनी माँ और पिता के बीच एक 'फुटबॉल' बनकर रह गया है:

"बंटी को लगता कि वह कोई सामान है, जिसे कभी यहाँ से वहाँ, और कभी वहाँ से यहाँ खिसका दिया जाता है। उसकी अपनी कोई ज़मीन नहीं थी।"6

यह पंक्तियाँ सिद्ध करती हैं कि तलाक के बाद बच्चों के लिए सुकून पाना वाकई मुश्किल होता है। एक माँ के लिए यह कदम उठाना 'मजबूरी' तब बन जाता है जब उसे लगता है कि अब इस रिश्ते में जहर के सिवा कुछ नहीं बचा। वह थक जाती है अकेले रिश्ता निभाते-निभाते।

, स्त्री अपनी मर्जी से जीवन को दूसरा मौका देना चाहती है। वह अपनी पहचान बनाना चाहती है। शकुन का डॉ. जोशी से विवाह करना इसी 'दूसरे मौके' की तलाश थी। हालाँकि बंटी के कारण वह पूर्णतः सुखी नहीं हो पाती, लेकिन वह यह संदेश जरूर देती है कि स्त्री को अपनी खुशियों का गला नहीं घोंटना चाहिए।

नई सदी की स्त्री शकुन के अनुभवों से सीख रही है। वह अब 'बंटी' को स्पष्टता के साथ पालना चाहती है। वह कोशिश करती है कि तलाक के बाद भी बच्चा पिता से मिले, लेकिन वह स्वयं उस 'बोझ' को ढोने से इनकार कर देती है जो उसे "तुम मेरे टुकड़ों पर पलती हो" जैसे तानों की याद दिलाता रहे। यह बदलाव ही आज के साहित्य और समाज का नया सत्य है।

प्रभा खेतान के 'अन्या से अनन्या' के माध्यम से हमने यह समझा कि जिस रिश्ते में 'नाम' और 'सामाजिक स्वीकृति' न हो, वह केवल एक अंतहीन अंधेरा है। आज की स्त्री ऐसी 'अनाम आजादी' के छलावे में अपनी जिंदगी तबाह नहीं करना चाहती। उसे नाम भी चाहिए, सम्मान भी और अपने पैरों के नीचे अपनी ज़मीन भी। "अधिकारहीन स्वतंत्रता केवल एक भ्रम है। जब तक स्त्री समाज में और उस रिश्ते में ससम्मान अपना नाम और पहचान हासिल नहीं कर लेती, तब तक उसकी हर आज़ादी अधूरी और आत्मघाती है।

निष्कर्ष:

प्रस्तुत आलेख के विस्तृत विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि नई सदी में 'तलाक' की परिभाषा सामाजिक विचलन से हटकर व्यक्तिगत गरिमा और अस्मिता के प्रश्न से जुड़ गई है। हिंदी कथा-साहित्य के माध्यम से हमने देखा कि समकालीन स्त्री अब उन रूढ़िवादी रस्मों और बंधनों को ढोने के लिए तैयार नहीं है, जो उसके मानसिक और भावनात्मक अस्तित्व को कुचलते हों।

शोध का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह उभरकर आया है कि आज की स्त्री के लिए 'आत्मसम्मान' (Self-respect) सर्वोपरि है। तुम मेरे टुकड़ों पर पलती हो जैसे पितृसत्तात्मक ताने अब उस स्त्री के लिए असहय हैं जो अपनी शिक्षा और योग्यता के बल पर 'अपने पैरों पर खड़ा' होना चाहती है। मन्नू भंडारी की 'शकुन' से लेकर मैत्रेयी पुष्पा की 'भीतरी गुड़िया' तक का सफर यही सिद्ध करता है कि एक अपमानजनक रिश्ते में तिल-तिल कर मरने से बेहतर है कि उसे साहस के साथ समाप्त कर दिया जाए।

एक माँ के लिए तलाक का निर्णय कभी आसान नहीं होता। आलेख यह प्रमाणित करता है कि स्त्री अंतिम समय तक रिश्ते को बचाने का हर संभव प्रयास करती है, किंतु जब वह 'बचते-बचाते थक जाती है', तब वह अपने और अपने बच्चों के सुखद भविष्य के लिए इस कठोर मार्ग का चुनाव करती है। 'आपका बंटी' का उदाहरण यह स्पष्ट करता है कि घुटते हुए माहौल में पलने वाले बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए माता-पिता का गरिमापूर्ण अलगाव एक अनिवार्य आवश्यकता बन जाता है।

नई सदी की स्त्री ऐसी गुमनाम आजादी के बजाय एक स्पष्ट पहचान और ससम्मान जीवन की पक्षधर है। 'तलाक' अब कोई हार या कलंक नहीं है, बल्कि यह जीवन को एक 'दूसरा मौका' देने की प्रक्रिया है। यह उस साहस का उद्घोष है जहाँ स्त्री यह साबित करती है कि वह किसी के भरोसे जीने वाली वस्तु नहीं, बल्कि अपनी जिंदगी की स्वयं मालिक है। यह बदलाव समाज के लिए एक चुनौती भी है और एक नई स्वस्थ शुरुआत का संकेत भी, जहाँ रिश्तों का आधार 'दबाव' नहीं, अपितु 'बराबरी और सम्मान' होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1.मन्नू भंडारी, आपका बंटी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण २०२२।

2. वही, पृ० ३४।

3. वही, पृ० ८९।

4. वही, पृ० १५६।

5. अलका सरावगी, कलि-कथा: वाया बाईपास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. वही, पृ० ९४।

7. मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया (आत्मकथा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

8. वही, पृ० ७८।

9. वही, पृ० १२४।

10.प्रभा खेतान, अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० १४३।

11.कृष्णा सोबती, ऐ लड़की, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

12. तेजेंद्र शर्मा, दीवार में रास्ता (कहानी संग्रह), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।पृ०७२

13 नामवर सिंह, कहानी: नयी कहानी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली। पृ०१६७

14. सिमोन दे बुआ, स्त्री उपेक्षिता (द सेकेंड सेक्स का हिंदी अनुवाद), अनुवादक: प्रभा खेतान, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

15.राय, गोपाल; हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली। पृ०१४५

16.मिश्र, रामदरश; हिंदी कहानी: अंतरंग पहचान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

17.शर्मा, रामविलास; आस्था और सौंदर्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

18.गुप्त, रमणिका; स्त्री विमर्श का लोक, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली।पृ०१३५

19.हंस (मासिक पत्रिका), संपादक: संजय सहाय, दिल्ली (विभिन्न स्त्री विमर्श विशेषांक)।

20.नया ज्ञानोदय, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली (समकालीन कहानी विशेषांक)। पृ०८७